RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-05
Issue-09
September-2020

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]
DOI: https://doi.org/10.31305/rrijm.2020.v05.i09.052

आधुनिक भारतीय समाज में सामाजिक न्याय

डॉ0 रनीता कुमारी

समाजशास्त्र विभाग, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

आधुनिक संदर्भ में स्वतंत्रता, समानता, मानव व्यक्तित्व की गरिमा की रक्षा तथा भ्रातृत्व सामाजिक न्याय के मुख्य तत्त्व हैं। इनमें समानता सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है स्वतंत्रता। शेष दोनों तत्त्व कमोबेश इन दोनों तत्त्वों से व्युत्पन्न हैं। इस कसौटी पर यदि हम परम्परात्मक सामाजिक विधान तथा परम्परात्मक संस्थात्मक संरचना को परखें तो पायेंगे कि परम्परात्मक भारतीय समाज सामाजिक अन्याय पर आधारित था। शास्त्रीय विधान भेदभावपूर्ण थे। यह भेदभाव कतिपय वर्गों के साथ बहुत अधिक था। विशेषरूप से निम्न वर्णीय लोगों व स्त्रियों को दासतापूर्ण जीवन व्यतीत करना पड़ता था। उन्हें स्वतंत्रता नहीं थी, समानता का अधिकार नहीं था। समाज में उनका कोई सम्मान नहीं था, उनके व्यक्तित्व का कोई मूल्य नहीं था। उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया जाता था। सामाजिक ढाँचा स्तरीकृत असमानता के सिद्धांत पर गठित था तथा सम्पत्ति एवं भौतिक संसाधनों पर स्वामित्व में भारी विषमता थी। भारतीय उप महाद्वीप में जाति का अस्तित्व केवल हिन्दू समाज में ही नहीं अपितु मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध सहित प्रायः सभी समाजों में देखने को मिलता है। इसलिये जाति पर आधारित असमानता और भेदभाव भी केवल हिन्दू समाज में नहीं वरन् कमोबेश भारतीय उपमहाद्वीप के सभी समाजों में विद्यमान था। दूसरे शब्दों में, सामाजिक अन्याय की स्थिति भी कमोबेश परम्परात्मक भारतीय समाज के सभी घटकों में विद्यमान थी।

राष्ट्रीय आंदोलन के समय में ही नागरिकों को मौलिक अधिकार प्रदान किये जाने और सभी के साथ न्याय किये जाने के लिये संघर्ष चल रहा था। तत्कालीन ब्रिटिश हुकूमत ने 'इंडिया एक्ट' (1935) के अन्तर्गत मौलिक अधिकारों का प्रावधान किये जाने की माँग को ठुकरा दिया। यद्यपि स्त्रियों, अल्पसंख्यकों तथा अनुसूचित जातियों व जनजातियों की बेहतरी के लिये कुछ प्रयास किये गये किन्तु वे अपर्याप्त थे। हाँ राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिये संघर्ष कर रही जनता और राष्ट्रीय नेतृत्व की मानव अधिकार एवं सामाजिक न्याय के प्रति प्रतिबद्धता से यह धारणा अवश्यक बलवती हो गई थी कि स्वतंत्रोपरांत राष्ट्र के संविधान में इन तत्त्वों को आवश्यक रूप से समाहित किया जायेगा। ऐसा हुआ भी।

सामाजिक न्याय की स्थापना का जो लक्ष्य स्वाधीनता आंदोलन के दौरान निर्धारित किया गया था उसे दृष्टिगत रखते हुये संविधान सभा ने संविधान की रचना की। संविधान निर्माताओं ने संविधान के माध्यम से सामाजिक न्याय पर आधारित भावी भारतीय समाज की परिकल्पना की और उसे मूर्त रूप प्रदान करने के लिये संविधान में आवश्यक उपबन्ध व प्रावधान किये। इस सम्बन्ध में मुख्यरूप से निम्न तीन प्रकार के प्रयास किये गये।

प्रथमतः परम्परात्मक शास्त्रीय नियमों जो भेदभाव व अन्याय पर आधारित थे को समाप्त कर दिया गया। उनके स्थानपर संविधान के रूप में सामाजिक न्याय पर आधारित एक नई संहिता को अंगीकार किया गया।

द्वितीयतः, संविधान व उसके अनुगामी नये विधानों के लागू होने के साथ जाति व जाति से सम्बन्धित जजमानी एवं जमींदारी व्यवस्थाओं आदि का वैधानिक अस्तित्व समाप्त हो गया। शोषण व अन्याय पर आधारित इन संस्थाओं के वैधानिक आधार की समाप्ति के साथ न्याय पर आधारित समतावादी समाज की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हुआ। ग्राम पंचायत, विधायिका, स्वतंत्र न्याय पालिका एवं लौकिक शैक्षिक संस्थाओं के अतिरिक्त मिल व कारखानों, बैंक व सहकारिता, होटल एवं अस्पताल तथा नौकरशाही आदि संस्थाओं का विकास हुआ जिससे समाज में परम्परात्मक भेदभाव एवं परम्परात्मक जातीय पहचान कमजोर हुई।

तृतीयतः, संवैधानिक निर्देशों के अनुरूप समाज के अशिक्षित, कमजोर, निर्धन तथा अन्याय व शोषण से पीड़ित तबकों के उत्थान के लिये शासन द्वारा समयबद्ध व नियोजित कार्यक्रमों का क्रियान्वित किया जाना भी सामाजिक न्याय की स्थापना की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। इन कार्यक्रमों को लागू किये जाने के पीछे मान्यता यह थी कि विकास कार्यक्रमों के माध्यम से जब तक कमजोर वर्गों की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार नहीं होता तब तक उनके लिये सामाजिक न्याय सम्बन्धी संवैधानिक प्रावधानों से समुचित लाभ उठा पाना संभव नहीं होगा।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

संदर्भ ग्रंथ सूची :

[1]. बी.आर. अम्बेडकर : डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर – राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज (खण्ड 5), बम्बई, गवर्नमेंट ऑफ महाराष्ट्र पब्लिकेशन्स, 1989।
[2]. मार्क गैलेन्टर : कम्पीटिंग इनेक्वेलिटिज, दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1984।
[3]. भगवान दास : दस स्पोक अम्बेडकर (खण्ड 3), जालंधर, बुद्धिस्ट पब्लिशिंग हाउस, 1979।
[4]. आर.जी. सिंह : भारत में सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक समस्यायें, भोपाल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1987।
[5]. आर.जी. सिंह : डॉ0 अम्बेडकर के सामाजिक विचार, भोपाल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 1991।

RRIJM 2015, All Rights Reserved